सामाजिक संघर्ष का दस्तावेज : पाँव तले की दूब

प्रा.डा. एस.एल.यशवंतकर
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, गढ़ी
ता.गेवराई जि. बीड

आदिवासियों को विकास की धारा में लाने के लिए बजाय उन्हें एक सोची समझी साजिश के साथ दुर्गम जंगलों पहाड़ों में सभ्यता और संस्कृति से दूर जीवन जीने के लिए विवश किया गया | आदिवासियों को दैत्य, राक्षस करार देकर उसके इतिहास और संस्कृति को बदनाम किया फलस्वरूप इस समाज की सोच, विचार भाषा, संस्कृति का विकास रूक सा गया अर्थात समाज से वे कटते गये | दुनिया से बेखबर दुर्गम जंगलों में कई मुसीबतों को झेलना पड़ा | इतना ही नहीं तो इन्होंने अपनी स्वयं की सभ्यता संस्कृति को भी बचाए रखा | आदिवासियों को जीवन के कई स्तरों पर संघर्ष झेलना पड़ रहा है | जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि | कथाकार संजीव ने अपने उपन्यासों में आदिवासियों के जन-जीवन को बड़े यथार्थ ढंग से प्रस्तुत किया है | आदिवासियों के सामाजिक संघर्ष को बखूबी से प्रस्तुत किया है |

'पाँव तले की दूब' यह संजीव का लघु उपन्यास है जो प्रथम पुरूष शैली में लिखा है | उपन्यास में झारखंड के पंचपहाडी क्षेत्र में स्थित डोकरी ताप विद्युत संस्थान, बघामुंडी और मेझिया गाँव के परिवेश का संजीव अंकन यथार्थ के धरातल पर किया है | उपन्यास में बढ़ते औद्योगिकरण के कारण विस्थापित होते आदिवासी समाज तथा औद्योगिकरण के जहरीले प्रदुषण से आदिवासी बस्तियाँ उनके खेत, जंगल और जल पर गंभीर दुष्परिणाम होते है | इसकी तीव्र भावना युवक फिलिप के मन में है वह पुरे जंगल को ही आग लगाकर कहता है - "यह धरती, हमारी धरती सोना उगलती है और इस सोने की धरती की हम कंगाल संतान है |"[1] संपुर्ण उपन्यास के केंद्र में सुदीप्त प्रमुख होने के बावजुद भी यह उसकी कथा नहीं है तो उसके माध्यम से उपन्यासकार ने आदिवासी जीवन के उन तमाम अनबूए संदर्भों को उजागर करने का प्रयास बड़ी सफलता से किया है, तो दूसरी ओर झारखण्ड मुक्ति आंदोलन तथा स्वतंत्र राज्य निर्माण की प्रक्रिया की सुगबुगाहट भी इस उपन्यास में दिखाई देती है |

विवेच्य उपन्यास में आदिवासियों को किस तरह सरकार और राजनेताओं की मिलीभगत के सहारे औद्योगिकरण के नाम पर बिमारियों में जकड़ा रहे है इसका चित्रण है | उपन्यास में डोकरी ताप विद्युत संस्थान का प्रदुषित गंदा पानी मनसा नाले में छोडा जाता है, जो वहाँ के आदिवासियों के पीने के पानी का एकमात्र स्त्रोत है उपर से चिमनी जहरिला गैस छोड़कर पुरे इलाके को काला कर देती है जिसके चलते कई आदिवासी स्त्री-पुरूष लुले-लंगडे एवं लकडवे की बिमारी से ग्रसित है- उपन्यास का नायक सुदीप्त आदिवासी बस्ती को देखकर कहता है- "कई लड़के-लड़कियाँ और बुढ़े लकवे के मारे से दिख रहे है और उस पर स्याह चहरों की भयावनी उजली आँखे भरी दोहरी में मुझे प्रेतों और डायनों का साया मँडराने लगा |"[2] ऐसी बिमरियों से ग्रसत आदिवासियों को अस्पताल में जाने के लिए पैसें नही है | जैसे-तैसे गए तो उन्हें वहाँ से भगाया जाता है | संजीव ने इस उपन्यास के माध्यम से सरकार की आँखे खोली है | उन्होंने उजागर किया है कि आदिवासी बसाहरों में घातक रसायनों का उत्सर्जन करनेवाले अनेक प्रदुषणकारी कल कारखानों के निर्माण से संपूर्ण आदिवासी समाज का अस्तित्व खतरे में आ गया है |

आदिवासी नारी जीवन का बहुत बड़ा अभिशाप डायन प्रथा है | धर्मगुरू ओझा गाँव की किसी भी स्त्री का इस क्रुर डायन प्रथा कर आड में आर्थिक शोषण करते है | इस उपन्यास में मेझिया गाँव के ओझा गाँव में फैलनेवाली बिमारी और पशुओं को मृत्युओं के कारण गाँव की बाँझ औरत मंगरी को मानकर उसे डायन घोषित कर पत्थरों से मार-मारकर उसकी जान लेते है | पंडित इस घटना की सच्चाई सुदीप्त को बताते हुए कहता है कि- "औझा ने ही इस औरत को डायन कहकर उकसाया था तीन सौ रूपये और एक बकरे की माँग कर रहा था |"[3] इस तरह आदिवासियों के आर्थिक संघर्ष को उद्घाटित किया है |

आदिवासियों की सामाजिक उपेक्षा होती है | इसका बेबाक चित्रण विवेच्य उपन्यास में हुआ है | आदिवासियों की उपेक्षा करनेवाले सिन्हा साहब और उनके मित्रों पर करारा प्रहार करते हुए सुदीप्त कहता है - अगर आप यह सोचकर घृणा करते हो कि ये काले है तो आप खुद क्या है गोरों की नजर में ? फिर आप में और नस्लवादी गोरो अफीकन, अमेरिकन जातियों मे फर्क कहा है |"[4] कहने का आशय यह है कि आदिवासी समाज को उच्चवर्णिय समाजद्वारा जातिभेद के माध्यम से अनेक यातनाएँ दी जाती है | जिसके विरोध में आदिवासी समाज की नई पीढ़ी संघर्ष करती नजर आ रही है | दुर्गम स्थानों में निवास, अज्ञानता, अंधविश्वास, अर्थाभाव और स्कूल के अभाव के कारण आदिवासी समाज शिक्षा से बहुत दूर था | परिणाम स्वरूप समाज का विकास थम सा गया था | शिक्षा की जागरूकता और महत्व के कारण और वे शिक्षा की और आकृष्ट होने लगे तो उन्हें वहाँ भी संघर्ष करना पड़ रहा है |

विवेच्य उपन्यास में अपने समाज का शोषण करनेवाली समाज और अर्थव्यवस्था को जड़ से मिटाने का और आदिवासियों के लिए स्वतंत्र झारखण्ड राज्य की निर्मिती का धेय्य लेकर चलनेवाला आदिवासी युवक फिलिप अपनी पार्टी के वरिष्ठ नेताओं के आन्दोलन से दूर जाने और पुलिस द्वारा आंदोलन को नष्ट करने से क्रोधित होकर मानसिक दबाव में आता है | आदिवासियों के विकास के लिए अपनी समग्र जिंदगी न्यौछावर करनेवाला सुदीप्त समाज में परिवर्तन न होने के कारण आत्महत्या करते हुए कहता है कि, "वर्षों से में एक ही कहानी लिख रहा था | मगर जब कहानी जीने और लिखने का फर्क किए जाए तो उसकी चुनौति सामने आती है | मुझे स्वीकारने में शर्म नहीं की में एक चरित्र तक खड़ा न कर सका | न कालीचरण किस्कु, न गोपाल, हँसदा, सुखमय बाबु, मनीष, फिलिप शीला भी नहीं |"[5] उपन्यास के कई पात्र जीवन में हुई हार से निराश, हताश होकर क्या बराबर क्या गलत है के द्वद्व में ग्रस्त होकर मानसिक संघर्ष में घिरे हुए नजर आते है |

सरकार और पुलिस की मिलीभगत से आदिवासियों का आर्थिक शोषण होता है | उपन्यास में पुलिस बिना कोई पुछताछ किए किसी भ्झी जुर्म में किसी भी आदिवासी युवक को झुठे इल्जाम लगाकर गिरफ्तार करती है | तिवारी साहब के घर पर हुई चोरी के झूठे इल्जाम में जब से निर्दोष कईता को पकड़कर ले जाने लगती है | तब मेझिया के सभी आदिवासी स्त्री-पुरूष संतप्त होकर कहते है- "मारों सालों को ! आज इनका गुमान इनकी गांड़ में डाल दो...| वर्दी के साथ-साथ चमड़ा भी उतार लो |"[6] कईता और बिसुन को पुलिस मुक्त कर भाग जाते है | पुलिस के हर दिन बढ़ते अन्याय और अत्याचार से त्रस्त होकर उनके साथ संघर्ष करने की भावना आदिवासियों में प्रबल होती है |

विवेच्य उपन्यास में विस्थापन से संघर्ष करते हुए दिखाया है | विस्थापन से इस समाज का सामाजिक अस्तित्व ही खतरे में आ गया है | उपन्यास का नायक सुदीप्त आदिवासियों के इसी दर्द को व्यक्त करते हुए कहता है - "पर अन्याय देखो आदिवासियों को जिनकी जमीन पर यह कारखाने लग रहे है, उन्हें टोटली डिप्राइव किया जा रहा है इस संपत्ति में उनकी भागीदारी तो खत्म की हो जा रही है, उन्हें जमीन से भी बेदखल किया जा रहा है | मुआवजा भी अफसरों के पेट में | वर्षों पहले यहाँ टोकरी ओर मकरा नाम के दो गाँव हुआ करत थे | किसी ने फुँक मारकर उड़ा दिया था उन्हें | कहाँ गए वे विस्थापित लोग |"[7]

भोगवादी प्रवृत्ती से संघर्ष विवेच्य उपन्यास में दिखाई देता है | आदिवासी स्त्री का स्वभाव मुलतः खुला होने का लाभ उठाकर सभ्य समाज के लोग उसका लैंगिक शोषण करते है | विवेच्य उपन्यास में सरकारी अफसर वनविभाग के पुलिस में माझो सुदीप्त को अपने गाँव में स्त्रियों पर बढ़ते अत्याचारों के संदर्भ में कहता है - "जानतो सिरिफ जंगल का सिपाही ही नहीं अब तो भदरीवाल सुक्खु सिंह का आदमी भी आता है और गाँव में लड़की लोग को फुसलाता है |"[8] इस प्रकार आदिवासी औरतों को अपनी भोगवादी दृष्टि से देखनेवाले पुरूष को विरोध करने का साहस उपन्यास के पात्रों में है |

आदिवासियों को मुलभूत आवश्यकताओं के लिए संघर्ष करना पड़ता है इसका बेबाक चित्रण विवेच्य उपन्यास में है | आदिवासियों को परम्परागत मुलभूत आवश्यकताओं के लिए ही संघर्ष करना पड़ता है | आधुनिक मुलभूत आवश्यकताओं की बात तो दूर रही | इन्हें जीते-जी तन ढ़कने के लिए न कपड़ा मिलता है और पेट भरने के लिए अन्न रहने के लिए न आवास है | पहनने के लिए न चप्पल है | मेझिया आदिवासी को देखकर समीर कहता है- "वे इतने गरीब थे कि कपड़ा के नाम पर चिथडे का कच्छा पहने हुए थे, पुट्टे तक खुले हुए, औरतों को जैसे-जैसे बदन ठकने को मिला है कपड़ा | बच्चे कंगाल जैसे |"[9]

इस तरह आदिवासियों को जीवन जीते समय जीवन के कई स्तरों पर संघर्ष करना पड़ रहा है इसका भयावह चित्रण संजीव ने विवेच्य उपन्यास में किया है |

संदर्भ सूची :-

1) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 21
2) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 78
3) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 33
4) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 55
5) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 141
6) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 59
7) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 28
8) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 77
9) पाँव तले की दूब - संजीव - पृ.सं. 15

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com